हिन्दी के माथे पर चिन्ता की बिन्दी

नवनीत भारद्वाज
सीमा सड़क संगठन , नई दिल्ली

एक अरब से अधिक लोगों द्वारा बोली-समझी जाने वाली भाषा का दुर्भाग्य यह है कि वह अपने ही देश-समाज में तिरस्कृत और उपेक्षित की जा रही है । संयुक्त राष्ट्र ने जिन भाषाओं को मान्यता दे रखी है उनमें से अधिकांश भाषाएं ऐसी हैं जिन्हे बोलने-समझने वाले हिंदी से बहुत कम हैं । फिर भी हिन्दी न तो संयुक्त राष्ट्र की भाषा बन पायी है और न ही इस संबंध में ठोस प्रयास ही हुए हैं ।

हालांकि हिन्दी का सवाल संयुक्त राष्ट्र की मान्यता मिल जाने से भी हल होने वाला नहीं, क्योंकि संवैधानिक तौर पर हिन्दी को राष्ट्रभाषा बना देने से भी कौन सा काम हिन्दी में होने लगा है । असली चिन्ता का विषय यही है । तमाम सरकारी प्रोत्साहन योजनाओं के बावजूद हिन्दी काम-काज की भाषा के बजाय राजकाज की भाषा बन गई है ।

हिन्दी की यह स्थिति इसलिए भी है कि वह सरकारी काम-काज में अनुवाद की भाषा के रूप में काम करती है । कार्य पहले अंग्रेजी में और फिर हिन्दी में किया जाता है । प्रायः अधिकांश पत्र-प्रारूप पहले अंग्रेजी में बनाए जाते हैं फिर शब्दावली आयोग द्वारा तय मानदण्डों और शब्दकोशों के अनुसार हिन्दी में उनका अनुवाद किया जाता है । अनुवाद में कोई हर्ज नहीं अगर वह मौलिक हो, लेकिन तमाम तकनीकी और कार्यालयी शब्दकोश तत्सम शब्दों से भरे पड़े हैं । स्थिति में सुधार तो तब संभव है जब सभी सरकारी काम-काज मूलतः हिन्दी में शुरू किए जाएं और अंग्रेजी अनुवाद की भाषा बने । पर ऐसा मात्र कहने से नहीं , करने से संभव होगा । इसके लिए आवश्यक है पहल की और घर कर गए विचारों में परिवर्तन लाने की।

चौदह सितम्बर को हिन्दी दिवस के आयोजन मात्र से हिन्दी मजबूत नहीं होगी । हमारे राष्ट्र को स्वतंत्र हुए आधी शताब्दी से ज्यादा समय हो गया है , फिर भी यह राष्ट्र पराई जुबान में बात करना गर्व का विषय समझता है । राजनैतिक स्वार्थों की बलिवेदी पर हमने राष्ट्रभाषा को भी चढ़ा दिया है । आज जरूरत है हिन्दी महिमा के पुष्प सम्पूर्ण भारत में पल्लवित करने की । हमारी भाषा हिन्दी प्राचीनता के गौरव से भी परिपूर्ण है तथा यह भाषा लगभग एक हजार वर्षों से जन-साधारण की सेवा करती आ रही है । हिन्दी में उच्च से उच्चतम कोटि का साहित्य विद्यमान है । इसलिए वह देश को सर्वोच्च ज्ञान और संदेश दे रही है । हिंदी के सर्वांगीण

विकास के लिए हमें हिन्दी का कार्यक्षेत्र बढ़ाना होगा तथा जन-जागृति के जरिए हिन्दी का प्रकाश फैलाना होगा ।

देखा जाए तो आज हिन्दी मैया की दशा ठीक नहीं है । बेचारी मातेश्वरी उसमें पैबंद पे पैबंद जड़-जड़ के अपनी इज्जत बचाने में जुटी है । हम खाते हिन्दी की हैं और बजाते अंग्रेजी की हैं । हिन्दी में बोलने वाले को मूर्ख समझा जाता है । अंग्रेजी में अपना ज्ञान बघारने वाला अपनी मूर्खता छिपाना चाहता है क्योंकि भाषा में बोलते ही उसकी एक-एक बात आम आदमी समझ लेता है और जान जाता है कि इस मोटी तोंद वाले आदमी पर जो सिर नामक खरबूजा धरा है उसमें क्या भरा है ? मीठा रसीला गूदा या फिर गोबर !

यह न समझ लेना कि हम अंग्रेजी आंटी के दुश्मन हैं । जी नहीं । भाषाएं तो मां होती हैं। भाषाओं में ज्ञान का भंडार छिपा है । हमें तो ज़ितनी प्यारी हिन्दी लगती है , उतनी ही अच्छी उर्दू , कन्नड़ , तमिल , मराठी , बंगाली और अंग्रेजी लगती है । लेकिन अपनी मैया से दुभात करके कोई बड़ा आदमी नहीं बन सकता ।

कोई हमसे पूछे कि माता ने हमें क्या दिया । अपने गले की कसम । हम एक गुमनाम , बेसहारा , कंगाल , साधनहीन थे । जिसे कोई पूछता नहीं था । मित्र हमें प्रतिभाहीन समझते । रिश्तेदारों ने कद्र नहीं की । समाज की नजरों में अतिसाधारण मनुष्य थे । बेमजा छोटी सी नौकरी और नामहीन जिन्दगी । लेकिन हमने हिन्दी मैया का दामन नहीं छोड़ा । आज मातारानी की कृपा से हमारे पास क्या नहीं है । हजारों दोस्त । लाखों मेहरबां । करोड़ों जानकार । जिधर जाते हैं उधर मुस्कराहटों की बहार । यह सब हिन्दी मैया की उपासना का परिणाम है । आदमी उसकी सबसे ज्यादा उपेक्षा करता है जो उसे आसानी से मयस्सर है । हिन्दी के साथ हम यही कर रहे हैं । कहते हैं चाहे बेटा कितना भी कपूत निकल जाए पर माता कभी कुमाता नहीं होती। ऐसे लोगों की भी कमी नहीं है जो हिन्दी से नफरत करते हैं पर अपनी हस्ती दर्शाने के लिए उन्हें झक मार के हिन्दी मैया के चरणों में नाक रगड़नी पड़ती है ।

हिन्दी हमारी मां है । उर्दू हमारी मौसी है । अंग्रेजी हमारी आंटी है। कन्नड़ हमारी काकी है। मराठी हमारी ताई है। बंगाली हमारी चाची है। गुजराती हमारी भाभी है। भाषाएं तो अम्मा होती हैं , ममतामयी मां । प्यारों अपनी मां से प्रेम करना ही नहीं जताना भी जरूरी है । लेकिन दुख से कहना पड़ता है कि हे हिन्दी मैया ! हम तेरे वो नाकाबिल बेटे हैं जिनकी वजह से आज तेरा दामन चिन्दी-चिन्दी हो रहा है ।

भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है , एक सांस्कृतिक उपकरण है । वह जितनी ज्यादा बोली-पढ़ी-समझी जाएगी , उसकी मान्यता उतनी ही बढ़ेगी । हिन्दी को निश्चित रूप से संयुक्त राष्ट्र की भाषा के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए, लेकिन क्या हम अपने आचरण में इसके लिए वैसे सद्प्रयास कर पा रह हैं जैसे छोटे-छोटे मुल्कों ने अपनी भाषाओं के लिए किए।

******

दुनियाभर मे शायद ही ऐसी कोई विकसित भाषा हो जो सरलता में और अभिव्यक्ति की दक्षता में हिंदी की बराबरी कर सके ।